वीरशासन जयन्ती

-प्रो. वीरसागर जैन

आज वीरशासन जयन्ती है | आज की घटना से हम सभी परिचित हैं, अत: मैं उसे यहाँ दोहराता नहीं चाहता हूँ, परन्तु उस घटना के उस प्रसंग की ओर आपका विशेष ध्यान आकर्षित करना चाहता हूँ, जिसमें सौधर्म इन्द्र ब्राह्मण के वेष में जाकर इन्द्रभूति गौतम से निम्नलिखित श्लोक का अर्थ पूछता है-

त्रैकाल्यं द्रव्यषट्कं नवपदसहितं जीवषट्कायलेश्या:
पंचान्ये चास्तिकाया व्रतसमितिगतिर्ज्ञानचारित्रभेदा: |
इत्येतन्मोक्षमूलं त्रिभुवनमहितैर्प्रोक्तमर्हद्भिरीशै:
प्रत्येति श्रद्दधाति स्पृशति च मतिमान् य: स वै शुद्धदृष्टि: ||

और वह नहीं बता पाता है | इसके बाद वह तीर्थंकर भगवान महावीर भगवान के समवशरण की ओर ही आ जाता है और वहाँ जिनदीक्षा लेकर गणधर पद को प्राप्त कर लेता है | तीर्थंकर महावीर की दिव्यध्वनि खिरने लगती है |

यहाँ इस प्रसंग में एक यह बात मेरी समझ में बिलकुल नहीं आती थी कि आखिर इस श्लोक में ऐसी क्या कठिनाई है कि इन्द्रभूति गौतम जैसे महापंडित को इसका अर्थ नहीं आ रहा था | एक ओर तो हम उसे न्याय, व्याकरण, दर्शन आदि सभी शास्त्रों का धुरन्धर पण्डित कह रहे हैं और दूसरी ओर यह भी कह रहे हैं कि उसे इस श्लोक का अर्थ नहीं आया | भला ऐसा कैसे हो सकता है ? इस श्लोक के अर्थ को तो कोई भी संस्कृतज्ञ व्यक्ति आसानी से बता सकता है | फिर वे कैसे नहीं बता सके ? मेरी समझ में यह बात कभी नहीं आती थी और मैं हमेशा ही इस बात से बहुत परेशान रहता था | मैंने अनेक बार विद्वानों से भी इस बात को पूछा, पर मेरा समाधान नहीं हो सका |

आखिरकार अब मुझे जैनदर्शन के स्याद्वाद सिद्धान्त को गहराई से पढ़ते-पढ़ाते हुए यह समझ में आया कि इन्द्रभूति गौतम को इस श्लोक का केवल अर्थ ही नहीं बताना था, उसे अच्छी तरह समझाना भी तो था, उसे ठीक से सिद्ध भी तो करना था, पूछनेवाले को संतुष्ट भी तो करना था | और यही कार्य उसके लिए बहुत कठिन था, क्योंकि वह एकान्तवादी था | उसने बहुत शास्त्र पढ़े थे, विविध मत पढ़े थे, पर सब एकान्तरूप थे | वह एकान्तरूप शास्त्रों का ही पंडित था | एकान्तरूप शास्त्रों में 'त्रैकाल्यं द्रव्यषट्कं....' जैसी कोई बात बनती ही नहीं है, वह कैसे समझाता ? यही कारण है कि अनेकान्तवाद का आश्रय लेते ही उसे सारी बातें सही-सही समझ में आ गईं, उसका सारा ज्ञान सम्यक् हो गया |

जैन दर्शन के स्याद्वाद सिद्धान्त को समझने के बाद अब मुझे इस श्लोक को और इसकी सम्पूर्ण घटना को समझने में जो अद्भुत आनन्द आ रहा है, वह वचन-अगोचर है | मेरी भावना है कि वह आनन्द आपको भी प्राप्त हो | इसीलिए इसे यहाँ लिख रहा हूँ | मेरी दृष्टि में यह श्लोक साधारण नहीं है, बहुत गूढ़-गम्भीर है, इसमें जैनदर्शन की अनेक मौलिक विशेषताएँ भरी हुई हैं | इस श्लोक में समागत सारी की सारी बातें बहुत महत्त्वपूर्ण हैं और उनको

कहने का तात्पर्य यह है कि वे सब स्याद्वाद से ही समीचीनतया सिद्ध होती हैं, एकान्तवाद में बिलकुल भी नहीं सिद्ध हो सकती है | आइए, कुछ समझने की कोशिश करते हैं |

सबसे पहले तो उक्त श्लोक का हिन्दी भाषा में सरल अर्थ देखते हैं-

तीन काल, छह द्रव्य, नव पदार्थ, षट्काय जीव, षट् लेश्या, पंच अस्तिकाय, पंच व्रत, पंच समिति, पंच गति, पंच ज्ञान और पंच चारित्र -ये सब मोक्ष के मूल हैं, जो त्रिभुवनपूजित अर्हन्तों ने कहे हैं | जो व्यक्ति इन्हें ठीक से जानता है, मानता है और इनके अनुसार आचरण भी करता है, वही मतिमान् है, बुद्धिमान् है, शुद्धदृष्टि है, सम्यग्दृष्टि है |

अब यहाँ हम यदि गहराई से इसके एक-एक बिन्दु पर विचार करें तो स्पष्ट समझ में आता है कि ये सभी बातें स्याद्वाद में ही समीचीनतया सिद्ध होती हैं, एकान्तवाद में बिलकुल भी नहीं सिद्ध हो सकती हैं | यथा-

त्रैकाल्यं- भूत, भविष्य, वर्तमान -ये तीन काल हैं, परन्तु विचार कीजिए- ये तीन काल तभी सिद्ध हो सकते हैं, जब वस्तु अनेकान्तात्मक हो | एकान्तरूप वस्तु में ये तीन काल बन ही नहीं सकते | तीन काल मानते ही वस्तु उत्पाद-व्यय-ध्रौव्यात्मक सिद्ध हो जाती है, नित्यानित्यात्मक सिद्ध हो जाती है | सर्वथा नित्य या सर्वथा अनित्य नहीं रहती है | सर्वथा नित्य या सर्वथा अनित्य वस्तु में तीन काल बन ही नहीं सकते हैं |

सर्वथा नित्य या सर्वथा अनित्य वस्तु की तो वास्तव में सत्ता ही सिद्ध नहीं हो सकती है | नित्यानित्यात्मक अर्थात् उत्पाद-व्यय-ध्रौव्यात्मक वस्तु ही सत् सिद्ध होती है, जैसा कि तत्त्वार्थसूत्र (5/30) में भी कहा गया है- 'उत्पाद-व्यय-ध्रौव्ययुक्तं सत्' |

सर्वथा नित्य या सर्वथा अनित्य वस्तु में तो अर्थक्रिया ही नहीं बनती है, अत: वस्तु को अनेकान्तात्मक अर्थात् नित्यानित्यात्मक या उत्पाद-व्यय-ध्रौव्यात्मक मानना अनिवार्य है | ऐसा माने बिना तीन काल की बात कथमपि नहीं मानी जा सकती है | तीन काल वस्तुतः परस्पर सापेक्ष हैं, निरपेक्ष नहीं हैं, जैसा कि आचार्य देवसेन कृत आराधनासार, गाथा 14 की टीका में समागत निम्नलिखित श्लोक में भी कहा गया है-

कालास्त्रयोऽप्यतीताद्या तानपेक्ष्य मिथोऽप्यमी |
प्रवर्तेरन् यतो नैकः केवलं क्वापि दृश्यते ||

अर्थ- अतीत आदि तीनों कालों की प्रवृत्ति परस्पर अपेक्षा रखकर ही होती है, क्योंकि एक काल अकेला कहीं दृष्टिगोचर नहीं होता |

इस प्रकार हम देखते हैं कि तीन काल की बात, जो देखने में बहुत छोटी-सी लगती है, पर वह भी अनेकान्तवाद को स्वीकार किये बिना सिद्ध नहीं होती है | तब अन्य विषयों की क्या बात ? सभी विषय वस्तुतः अनेकान्तवाद में ही जीवित रहते हैं |

इस विषय की चर्चा बहुत गहरी है, पर अभी मुझसे लिखना सम्भव नहीं हो रहा है | आशा है आप थोड़े में ही समझ जाएँगे | फिर भी इसे और अच्छी तरह समझने के लिए आचार्य समन्तभद्र स्वामी कृत आप्तमीमांसा

का तृतीय परिच्छेद पढ़ना चाहिए | आचार्य समन्तभद्र स्वामी का यह कथन भी इस विषय में बहुत महत्त्वपूर्ण है कि हे जिनेन्द्र ! आप एक समय में उत्पाद-व्यय-ध्रौव्य को जानते हो -यह आपकी सर्वज्ञता का लांछन है | यथा-

स्थितिजननिरोधलक्षणं, चरमचरं च जगत् प्रतिक्षणम् |
इति जिन सकलज्ञलांछनं, वचनमिदं वदतांवरस्य ते ||

-बृहत्स्वयम्भूस्तोत्र, 114

तीन काल की भांति **छह द्रव्य** की व्यवस्था भी तभी सिद्ध हो सकती है जब यह लोक अनेकान्तात्मक हो, एकान्तरूप लोक में जीव, पुद्गल, धर्म, अधर्म, आकाश और काल -ये छह द्रव्य नहीं सिद्ध हो सकते |

इसी प्रकार **नव पदार्थ** की व्यवस्था भी तभी सिद्ध हो सकती है जब अनेकान्तवाद को स्वीकार किया जाए, एकान्तरूप व्यवस्था में जीव, अजीव, पुण्य, पाप, आस्रव, बन्ध, संवर, निर्जरा और मोक्ष -ये नव पदार्थ नहीं सिद्ध हो सकते |

इसी प्रकार **षट्काय जीव, षट् लेश्या, पंच अस्तिकाय, पंच व्रत, पंच समिति, पंच गति, पंच ज्ञान और पंच चारित्र** इत्यादि सभी की व्यवस्थाएँ तभी सिद्ध हो सकती हैं जब वस्तु अनेकान्तात्मक हो, एकान्तरूप वस्तु में इनमें से कोई भी बात कैसे भी नहीं बन सकती है | तथा अनेकान्तवाद जैन दर्शन का अमोघ चिह्न है | उसे स्वीकार करने पर मिथ्या दृष्टि रह नहीं सकती | वह व्यक्ति निश्चित ही शुद्धदृष्टि बन जाएगा | इस प्रकार इस श्लोक का अर्थ समझाने का अर्थ था- अनेकान्तवाद को स्वीकार करना |

अनेकान्तवाद को स्वीकार करनेवाला व्यक्ति ही मतिमान है, बुद्धिमान है, ज्ञानी है; एकान्तवादी तो मिथ्यावादी, आत्मघाती, पशु या अज्ञानी ही है |

उक्त श्लोक में पठित तीन काल, छह द्रव्य, नव पदार्थ, षट्काय जीव, षट् लेश्या, पंच अस्तिकाय, पंच व्रत, पंच समिति, पंच गति, पंच ज्ञान और पंच चारित्र -ये सब दो प्रकार के विषय हैं | कुछ विचारपरक हैं और कुछ आचारपरक हैं | इसका अभिप्राय यह है कि अनेकान्तवाद से ही सर्व विषय स्थापित किये जा सकते हैं, चाहे वे विचारपरक हों चाहे आचारपरक | अनेकान्तवाद के बिना न दर्शन खड़ा रह सकता है और न ही आचार | दोनों ही निष्प्राण हो जाएँगे |

दो विशेष बातें-

1.इन्द्र-गौतम-संवाद की यह घटना आषाढ शुक्ला पूर्णिमा को घटित हुई थी और तभी से लोक में गुरु पूर्णिमा का पर्व प्रारम्भ हुआ था, जैसाकि डॉ. नेमिचन्द्र शास्त्री ज्योतिषाचार्य ने 'तीर्थंकर महावीर और उनकी आचार्य परम्परा' भाग 1, पृष्ठ 187 पर लिखा है| यथा- "यह पावन दिन आषाढ़ी पूर्णिमा का था | इसी दिन गौतम ने दीक्षा धारण की थी | इसी कारण यह दिन गुरुपूर्णिमा के नाम से लोक में प्रसिद्ध है |"

2.त्रैकाल्यं द्रव्यषट्कं....इत्यादि श्लोक में ज्ञान, दर्शन, चारित्र के अर्थ में 'प्रत्येति श्रद्दधाति स्पृशति' शब्दों का प्रयोग हुआ है, जो मूल जिनागम के प्राचीन शब्द हैं | आचार्य कुन्दकुन्द ने भी समयसार, गाथा 275 और भावपाहुड, गाथा 84 में इन शब्दों का प्रयोग किया है |